'नई दुनिया'

१४ अगस्त १९९०

नेपाल नरेश का इरादा, अपने हक छोड़ने का नहीं है

शशिधर खाँ

जनतांत्रिक अधिकारों के लिए हुए व्यापक जनांदोलन के आगे आखिरकार नेपाल नरेश वीरेन्द्र वीर विक्रम शाहदेव को झुकना पड़ा और वे जनहित में संवैधानिक सुधारों के लिए राजी हो गए। नेपाल की सबसे बड़ी पार्टी नेपाली कांग्रेस की सरकार बन गई और कृष्णप्रसाद भट्टराई ने प्रधानमंत्री का पद संभाला। आंदोलन का संचालन मुख्य रूप से नेपाली कांग्रेस के नेताओं ने ही किया था, इसलिए उसकी माँग के मुताबिक एक संविधान आयोग गठित कर दिया गया जिसे संवैधानिक सुधारों के संबंध में अपने सुझाव अगस्त के अंतिम सप्ताह तक नरेश को दे देने थे। लेकिन नेपाली कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने जुलाई के प्रथम सप्ताह में ही चार दिनों के विचार विमर्श के बाद अपने सुझाव आयोग को सौंप दिए।

समिति ने द्विसदनीय शासन प्रणाली का सुझाव दिया है जिसकी अधिकांश बातें भारत और ब्रिटेन के संविधानों से मिलती-जुलती हैं। समिति के मुताबिक सेनाध्यक्ष और सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति श्री वीरेन्द्र प्रधानमंत्री की सलाह से करेंगे। अभी नेपाल की सेना 'शाही सेना' कहलाती है और वह सिर्फ सम्राट के प्रति वफादार होती है। समिति ने सुझाव दिया है कि एक अलग राष्ट्रीय सुरक्षा समिति बना दी जाए जिसके नियंत्रण में देश की सारी सेना रहेगी और वह मंत्रिमंडल के आदेश पर काम करेगी। सुरक्षा समिति के अध्यक्ष ही सेनाध्यक्ष कहलाएँगे।

सत्तारूढ़ नेपाली कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति का कहना है कि कुछ विशेष असामान्य परिस्थितियों में सम्राट को आपात-स्थिति घोषित करने का अधिकार होगा लेकिन मंत्रिमंडल की अनुशंसा पर ही यह संभव है। समिति के हिसाब से आपातकालीन स्थिति की घोषणा एक निश्चित अवधि के लिए होनी चाहिए जिसकी तीन महीने के अंदर संसद द्वारा मंजूरी आवश्यक होगी और आपात-स्थिति के दौरान लोगों के मौलिक अधिकार नहीं छीने जाएँगे। समिति ने ब्रिटेन के 'ओम्बड्समैन' और भारत के 'लोकायुक्त' की तरह यहाँ भी एक 'लोकपाल' का पद सृजित करने का सुझाव दिया है जो प्रधानमंत्री, मुख्य न्यायाधीश, मंत्रियों और उच्च पदस्थ अधिकारियों पर नजर रखेगा ताकि वे अपने पद तथा अधिकारों का दुरुपयोग न करने पाएँ।

नेपाली कांग्रेस चाहती है कि नेपाल न केवल गुट निरपेक्षता की नीति का अनुसरण करे, बल्कि संयुक्त राष्ट्र के आदर्शों को मजबूत करने के लिए भी प्रयत्नशील रहे। कुल मिलाकर सारी सत्ता जन प्रतिनिधियों के हाथ में केंद्रित करने और नेपाल नरेश को सिर्फ रबर स्टाम्प संवैधानिक प्रमुख बनाने की बात सोची गई है। लेकिन यह सारा कुछ निर्भर करता है नरेश की मर्जी पर कि वे इन सुझावों को मानते हैं या नहीं और अगर मानते हैं तो किस सीमा तक। नेपाली कांग्रेस ने अपने सुझाव संविधान आयोग को दिए हैं जो कांग्रेस सरकार के प्रति नहीं, नरेश के प्रति जवाबदेह है और संवैधानिक सुधारों से संबंधित सारे सुझावों पर भी आयोग को सम्राट के साथ बैठकर ही विचार विमर्श करना है जबकि सम्राट की मंशा कुछ और प्रतीत होती है। नेपाल के खुफिया सूत्रों के अनुसार नेपाली कांग्रेस की सरकार जरूर है लेकिन सारे अधिकार श्री वीरेन्द्र ने अपने हाथ में रखे हैं और अंदर ही अंदर उन्होंने इसका पूरा इंतजाम कर लिया है ताकि देश के भीतर तथा बाहर लोगों को झाँसे में रखने के लिए एक कठपुतली सरकार बनी रहे।

नेपाल की भावी व्यवस्था में नरेश की भूमिका के बारे में अभी तक प्रश्न चिह्न लगा हुआ है। श्री वीरेन्द्र ने ऊपर से उदार बनने का मुलम्मा दे रखा है और नीचे से उन्होंने सारे कूटनीतिक तामझाम अपनाने शुरू कर दिए हैं। विश्वस्त सूत्रों से पता चला है कि नेपाल नरेश स्वेच्छा से अपने अधिकारों में कमी करना चाहेंगे या कांग्रेस को ही अपने अभियान में सफलता मिलेगी, इसकी गुंजाइश कम लगती है।

प्रधानमंत्री बनने के साथ ही श्री भट्टराई कई जटिल समस्याओं से घिर गए हैं जिनका समाधान उनके वश का नहीं है। जनता को वास्तविक अधिकार दिलाने के लिए शुरू आंदोलन अभी चल ही रहा है। बीच में और कई नए आंदोलन शुरू हो गए हैं और श्री वीरेन्द्र ने सब कुछ प्रधानमंत्री पर छोड़कर अपने को बिल्कुल किनारा कर लिया है जबकि सारी सत्ता शाही महल में केंद्रित है। यहाँ तक कि सेना और पुलिस को भी प्रधानमंत्री अपने आदेश मानने को बाध्य नहीं कर सकते। इसके पीछे नरेश का उद्देश्य जनता को यह दिखाना है कि नेपाल में राजशाही बरकरार रखने से ही अमन चैन कायम रह सकता है।

एक ओर तराई इलाके में रहने वाले भारतीय मूल के ७५ लाख मधेसियाइयों ने गजेन्द्र नारायणसिंह के नेतृत्व में अपने अधिकारों की माँग को लेकर आंदोलन छेड़ दिया है। श्री सिंह ने नेपाल सद्भावना पार्टी बनाई है जिसके २९ और ३० जून को संपन्न विशाल सम्मेलन में तय हुआ कि नए बनने वाले संविधान में उचित प्रतिनिधित्व पाने के लिए हिंसात्मक रुख की जरूरत पड़े तो अपनाया जाए। मधेसियाई समुदाय का कहना है कि उनके साथ दूसरे दर्जे के नागरिकों जैसा सलूक होता आया है। सेना, पुलिस और अन्य सरकारी नौकरियों में उन्हें नहीं लिया जाता, इतना ही नहीं उनके बच्चों को शिक्षा, चिकित्सा की भी सुविधा प्राप्त नहीं है। १० वर्ष पहले उन्हें पंचायत में १० सीटें मिली थीं, लेकिन अधिकार कुछ नहीं था। अब वे नई संसद में अगले १० वर्ष के लिए आबादी के आधार पर सीटों के आरक्षण और हिंदी को नेपाल की दूसरी राजभाषा बनाने की माँग कर रहे हैं। संविधान आयोग में अपने प्रतिनिधि न लिए जाने से भी मधेसियाइयों को असंतोष है।

दूसरी ओर नक्सली हैं जो राजशाही बिल्कुल खत्म करके समाजवाद लाने के लिए पिछले २५ वर्षों से संघर्षरत हैं। जाने-माने नक्सली नेता मोहनचंद्र अधिकारी आंदोलन के दौरान नेपाली कांग्रेस के साथ थे और आज भी हैं (इनके गुट माले के झालनाथ खबाल कृषि एवं भूमि सुधार मंत्री हैं) लेकिन वे अपना क्रांतिकारी रुख छोड़ने को तैयार नहीं हैं। श्री अधिकारी १७ साल से जेल में थे, श्री कृष्णप्रसाद भट्टराई ने प्रधानमंत्री बनने के बाद उन्हें मुक्त किया। सिर्फ हिंसा में विश्वास रखने वाले श्री अधिकारी सरकार में शामिल जरूर हैं लेकिन उनकी और कांग्रेस की नीतियों में कई मुद्दों पर गंभीर मतभेद हैं। पिछले दिनों श्री भट्टराई दो दिन की भारत यात्रा पर आए और विवादास्पद पहलुओं पर समझौता हो जाने से उन्होंने थोड़ी राहत महसूस की लेकिन स्वदेश लौटने पर उनकी उपलब्धियों का वैसा स्वागत नहीं हुआ जैसा कि उन्होंने सोचा था। प्रधानमंत्री ने अपनी भारत यात्रा के क्रम में कहा कि नेपाल में हुए राजनीतिक परिवर्तन में भारत की ओर से मिले नैतिक समर्थन और सहानुभूति ने महती भूमिका निभाई है। नक्सली नेता श्री अधिकारी का कहना है कि ऐसा कहकर प्रधानमंत्री ने नेपाली जनता की भूमिका को कम करके आँका है और भारत की थोथी सद्भावना प्राप्त करने के लिए नेपाल की मान-मर्यादा को ठेस पहुँचाई है। समझौते के अन्य प्रावधानों पर भी उन्होंने कोई टिप्पणी नहीं की है।

एक और खूँखार उग्रवादियों का गुट है 'मशाल', जिसके सक्रिय नेता हैं- मोदनाथ प्रश्रित, मदन भंडारी और जीवराज अश्गित। इन लोगों का 'माले' के शीर्षस्थ नेताओं चंद्रप्रकाश मैनाली और राधाकृष्ण मैनाली के साथ वैसे तो वैचारिक मतभेद नहीं हैं क्योंकि सरकार में शामिल होने के बाद माले को अपनी नीतियाँ थोड़ी उदार करनी पड़ी हैं लेकिन राजशाही को बिल्कुल जड़ से खत्म करके पूरी तरह कम्युनिस्ट राज कायम करने पर दोनों सहमत हैं। दोनों गुट यह भी मानते हैं कि हिंसा और तोड़फोड़ के बिना नई व्यवस्था कायम करना संभव नहीं है। मोदनाथ प्रश्रित का कहना है कि मौजूदा परिवर्तन तो सिर्फ छलावा है। उनके मुताबिक मारीच मानसिंह श्रेष्ठ की जगह पर कृष्णप्रसाद भट्टराई आ गए हैं और सच तो यह है कि श्री भट्टराई को श्री श्रेष्ठ जितना भी अधिकार नहीं है।

मशाल ने लोगों को संघर्ष के लिए उकसाना शुरू कर दिया है और माहौल भी कुछ उसी तरह का है क्योंकि बढ़ती महँगाई से जनता के मन में असंतोष तो है ही। जून के मध्य में करीब दस हजार पहाड़ियों ने हथियारों के साथ बावेरी नदी के किनारे बसने के लिए प्रशासन द्वारा लगाए गए सुरक्षित वनों का विनाश शुरू कर दिया। मशाल की बदौलत पुलिस के हस्तक्षेप के बाद भी वे शांत नहीं हुए। पहाड़ियों का कहना है कि वे नेपाल के मूल निवासी हैं मगर उनकी अपनी कोई जगह जमीन नहीं है। वे खानाबदोश की तरह जी रहे हैं। इतने दिनों से सरकार पहाड़ियों की स्थिति से बेखबर है तो अब वे लड़कर अपना हक ले लेंगे।

नेपाल में ईसाइयों की आबादी ४० हजार है और ईसाई धर्म को मान्यता नहीं है। ईसाई नेता पादरी रॉबर्ट खात्रिक ने अब अपने धर्म को मान्यता देने की माँग शुरू कर दी है। हालाँकि इस मामले में तो नेपाली कांग्रेस के सेक्रेटरी जनरल गणेश मानसिंह ने दृढ़ रुख अपनाया है और साफ शब्दों में कह दिया है कि नेपाल हिंदू राष्ट्र ही बना रहेगा, भले अन्य धर्मावलंबियों के प्रति सख्ती न बरती जाए। अपनी ओर से उन्होंने ईसाइयों को आश्वासन दे दिया है कि उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाया जाएगा।

नेपाल के एक जाने-माने वकील (जिन्होंने अपना नाम बताने से इंकार किया) ने कहा है कि नरेश वीरेन्द्र के इरादे नेक नहीं लगते। उन्हें डर है कि श्री वीरेन्द्र कहीं अपने पिता की परंपरा को पुनः न दोहराएँ, जब १९६० में महाराज महेन्द्र ने श्री विश्वेश्वरप्रसाद कोईराला को जेल में डालकर उनकी जनतांत्रिक तरीके से चुनकर आई सरकार का बारा न्यारा कर दिया था। जनता का भी मौजूदा सरकार से विश्वास उठता जा रहा है क्योंकि यह अपने वायदे के मुताबिक पूर्व सरकार के मंत्रियों और अफसरों को अभी तक गिरफ्तार नहीं कर पाई है जिनमें से अधिकांश के बारे में कहा जाता है कि वे शाही महल में छुपे हैं।